पर्यावरणीय चिन्तन

कंचन त्रिपाठी*

भारतीय साहित्य में पर्यावरण एक महत्त्वपूर्ण विषय है। इसकी महत्ता का मुख्य कारण इसकी समन्वयवादिता है। वर्तमान परिदृश्य में इसका जो स्वरूप हम सभी के समक्ष उपस्थित हो रहा है अथवा सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक स्तर पर जो भी परिवर्तन या आश्चर्यजनक स्वरूप दृष्ट्रिगोचर हो रहा है उसका मौलिक कारण हमारी विचारधारा ही है जिस हेतु हम पर्यावरण जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर विचार नहीं कर पाते और उसके दुष्परिणाम के भागीदार बनते हैं।

मानव और पर्यावरण एक दूसरे के पूरक है। मानव अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में प्रकृति पर ही निर्भर रहता है। इसी कारण वह इससे सामंजस्य बनाये रखता है। पर्यावरण महत्त्वपूर्ण विषय है। महाभारत आदि ग्रंथों में भी इस पर प्रकाश डाला गया है। पर्यावरण को ईश्वर के अधीन माना जाता है। सम्पूर्ण पर्यावरण में एक ही परमात्मा समान रूप से विद्यमान है। समस्त प्राणी उसी से अनुप्राणित है। गीता के सामाजिक अध्ययन में भगवान श्रीकृष्ण कहते है –

"रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मिं शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु"।।
"पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु"।।

हे अर्जुन! मैं जल में रस हूँ, चन्द्रमा और सूर्य में प्रकाश हूँ, सम्पूर्ण वेदों में ओंकार हूँ, आकाश में शब्द और पुरुषों में पुरुषत्व हूँ, मैं पृथ्वी में पवित्र गन्ध और अग्नि में तेज हूँ तथा सम्पूर्ण भूतों में उनका जीवन और तपस्वियों में तप हूँ।

धार्मिक कार्यों में पीपल, बड़, आम्र के पल्लव, तुलसी, कमल, कुन्द आदि का प्रयोग अभिन्न रूप से किया जाता हैं। वातावरण को स्वच्छ और सुन्दर बनाने में प्रत्येक व्यक्ति की समान भागीदारी होती है हमें इस कर्तव्य का निःस्वार्थ भाव से पालन करना चाहिए, जिससे पर्यावरण प्रदूषण की समस्या ही ना उत्पन्न हो। इसी सन्दर्भ में महाभारत में भीष्म जी का कथन द्रष्ट्व्य है –

"तस्मात् तडागे सद्वृक्षा रोप्याः श्रेयोऽर्थिनां सदा।
पुत्रवत् परिपात्याश्च पुत्रास्ते धर्मतः स्मृताः"।।[2]

पर्यावरण की रक्षा करना हमारा नैतिक कर्तव्य है। महाभारत आदि ग्रंथों में इसे धार्मिक अंग स्वीकार किया जाता है। इसमें वर्णित हैं कि हम सम्पूर्ण पदार्थों में देवत्व की भावना विकसित कर पर्यावरण को सुरक्षित रख सकते है तथा उसका उचित ढ़ंग से उपभोग कर सकते है।

हमें सदैव प्रकृति के अनुकूल ही कार्य करना चाहिए। महाभारत में नियम, समय और मर्यादापूर्वक किसी भी कार्य को सम्पन्न करने की शिक्षा दी गयी हैं जिससे पर्यावरण सुरक्षित रह सके।

महाभारत में उल्लिखित हैं कि मानव और पर्यावरण में अन्योन्याश्रय सम्बन्ध हैं, मानव अपने अस्तित्व के लिए पर्यावरण पर आश्रित रहता है और मानव जैसे बुद्धिमान प्राणी के बिना पर्यावरण की कोई सार्थकता ही नहीं, उसका स्वस्थ और संतुलित अस्तित्व मानव के बिना अकल्पनीय हैं। अतः दोनों एक–दूसरे के अस्तित्व और संतुलित विकास के लिए सहयोगी बनकर ही अपनी सार्थकता सिद्ध कर सकते हैं। महाभारत में वर्षा के जलों को संरक्षित करने की अनेक विधियाँ वर्णित हैं। वर्षा का जल बावड़ी, कुएँ, तालाब आदि में सुरक्षित होकर वर्षा के पश्चात् भी जन–कल्याण के कार्य हेतु प्रयोग किया जा सकता हैं। यह कार्य पुण्यतम हैं, इसका वर्णन अश्वमेध पर्व में वर्णित हैं –

"तेषां वाप्यस्रकूपाश्च तटाकानि सरांसि च।
दीर्घिका पुष्पकारिण्यश्च सजलाश्च जलाशयः"।।[3]

महाभारत के अनुसार स्वस्थ जीवन प्रकृति के सान्निध्य में ही प्राप्त होता हैं अतएव जन–जीवन के अशान्त वातावरण ने जो सात्विक प्रभाव डाला है उसके परिणामस्वरूप ही उनका जीवन मौलिक चिन्तन और सहज व्यवहार से पूर्ण हो सका। उनके द्वारा किया गया समस्त पवित्र कर्म प्रकृति के कण–कण से सम्बन्धित हैं। अनुचित कल्पनाओं से दूर ऋषियों ने जो अनुभव किया उसी को आत्मसात

* **शोध–छात्रा, संस्कृत आचार्य नरेन्द्र देव, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय बभनान (गोण्डा)**

कर लिया, क्योंकि उनकी अपेक्षाएँ भी इसी से सम्बन्धित हैं। इसी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु पर्यावरण से बार–बार यही आशा की गयी कि वह प्राणियों की इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए सदैव स्थिर रहें।

महाभारत के अनुसार विद्वानों ने कभी भी प्रकृति के विपरीत कोई भी कार्य नहीं किया जिसके दुष्परिणाम का उन्हें भुक्त भोगी बनना पड़ा। महाभारत में ब्रह्मास्त्र का ज्ञान भीष्म, द्रोण, अर्जुन आदि सभी को था, किन्तु ब्रह्मास्त्र का प्रयोग न करना इन सभी की दूरदर्शिता का परिणाम हैं, क्योंकि इन सभी को इसके दुष्परिणाम का ज्ञान था। यदि इस ब्रह्मास्त्र का प्रयोग युद्धभूमि में हुआ होता तो समस्त प्राणि समुदाय क्षुधा (भूख) से व्याकुल होकर अपने प्राणों का त्याग कर देते क्योंकि इस ब्रह्मास्त्र का प्रयोग होने पर 12 वर्षों तक वर्षा नहीं होती। लोगों में विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती।

महाभारत में पर्यावरण को सत्त्व, रजस् गुणों से पूर्ण परमाणुओं का समूह कहा गया हैं, जो वर्तमान में प्रोटान, इलेक्ट्रान और न्यूट्रान हैं। इस सम्बन्ध में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा हैं –

"सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम्"।।[4]

विद्वत् जनों द्वारा कही गयी बातें जो हमें किसी सद्कार्य के लिए प्रेरित करें तो वह कार्य हमें अवश्य करना चाहिए, किन्तु महाभारत में व्यास जैसे विद्वान के कहने पर भी अश्वत्थामा ने अपने दिव्यास्त्रों को नहीं लौटाया अपितु उसका दिशा परिवर्तन किया। उसने उस दिव्यास्त्र द्वारा उत्तरा का गर्भपात कर दिया, जो पर्यावरण के नियम के विपरीत कार्य का ही दुष्परिणाम हैं।

पर्यावरण को संरक्षित रखने हेतु अनेक प्रकार के उपाय आज हमारे समाज में प्रचलित हैं किन्तु महाभारत काल में यह कार्य स्वतः लोगों द्वारा किया जाता था और पर्यावरण में प्रदूषण किञ्चित् मात्र भी न था। महाभारत के भीष्म पर्व में एक पक्षी द्वारा पर्यावरण को शुद्ध करने का प्रसंग प्राप्त होता हैं। वहाँ कहा गया है कि–

"भारुण्डा नाम शकुनास्तीक्ष्णतण्डा महाबला
तान् निर्हरन्तीह मृतान् दरीषु प्रक्षिपन्ति च"।।[5]

अर्थात् वहाँ कुरु वंश में 'भारुण्ड' नामक एक महाबली पक्षी हैं, जिनकी चोचें बड़ी तीखी होती है। वे वहाँ के मृत लोगों की लाशें उठाकर ले जाते और कन्दराओं में फेक देते। इसी भाँति यदि मनुष्य अपने अवशिष्टों को यथास्थान पर रख कर नष्ट करने का प्रयास करें तो पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त रखा जा सकता हैं। शवों की यथाविधि अन्त्येष्टि करनी चाहिए। महाभारत काल में भी शवों की अन्त्येष्टि की जाती थी। महाभारत युद्ध की समाप्ति होने पर धृतराष्ट्र के आदेशानुसार युधिष्ठिर द्वारा मृत योद्धाओं की अन्त्येष्टि क्रिया सम्पन्न की गयी। यह क्रिया केवल पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाने के लिए की गयी थी। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो पर्यावरण प्रदूषित होता और वहाँ लोगों का रहना कष्टमय हो जाता है।

मनुष्य को इस पृथ्वी के साथ सामंजस्य बनाये रखना चाहिए, ताकि इस पर कोई विकृति उत्पन्न न हो सकें। हम निःस्वार्थ भाव से इस धरा का उपभोग करें और उसकी सदैव रक्षा करें क्योंकि यह सभी की आश्रयदाता हैं।

महाभारत में अग्नि, पृथ्वी, जल, वायु और आकाश पर्यावरण के मूल स्रोत के रूप में स्वीकार किये गये हैं। इनके पूर्ण सामंजस्य और पूर्ण सम्मिलन से अच्छा पर्यावरण निर्मित होता हैं। ये सभी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। एक तत्त्व का अस्तित्व दूसरे तत्त्व पर आश्रित होता हैं। महाभारत में समस्त पदार्थों में चेतना स्वीकार की गयी है। क्षुद्र प्राणी की ही नहीं अपितु जड़ तत्व की भी महत्ता सर्वोपरि मानी गयी हैं। इस सम्पूर्ण विवेचन में हम देखते हैं कि महाभारत काल में भी पर्यावरण एक महत्त्वपूर्ण विषय था। पर्यावरण को संरक्षित रखना प्रत्येक मानव का कर्तव्य था और वे सभी अपने इस कर्तव्य का निःस्वार्थ भाव से पालन करते थे जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण मुक्त था।

सन्दर्भ–सूची

1. गीता : अध्याय 7, श्लोक 8–9।
2. महाभारत : भीष्मपर्व 3.14।
3. तदेव : अश्वमेध पर्व–?
4. तदेव : भीष्मपर्व, गीता अध्याय 14.5।
5. तदेव : भीष्मपर्व 7/112, पृ0 256।